**ओ३म्**

**‘ऋषि दयानन्द प्रणीत हिन्दी धर्मग्रन्थ सत्यार्थप्रकाश क्यों पढ़े?’**

**-मनमोहन कुमार आर्य, देहरादून।**

संसार में पुस्तकों व ग्रन्थों की बात करें तो इनकी संख्या अगणित कही जा सकती है। यदि कोई मनुष्य चाहे तो वह संसार की सभी पुस्तकें नहीं पढ़ सकता। यदि वह पढ़ सकता तो भी अनेक पुस्तकों का जीवन में कोई महत्व नहीं होता। कुछ व अधिकांश पुस्तकें तो समय व्यतीत करने के लिए ही लिखी व प्रकाशित की जाती हैं। कुछ ग्रन्थ ऐसे होते हैं जिनसे मनुष्य को निजी लाभ होता है। इन्हें हम शिक्षा की पुस्तकें कह सकते हैं। जो व्यक्ति जिन माता-पिता से उत्पन्न होता है उसे अपनी मातृभाषा का अध्ययन अवश्य करना चाहिये। उसके बाद वह अन्य महत्वपूर्ण कुछ अन्य भाषाओं का अध्ययन भी कर सकता है। भाषाओं का अध्ययन स्वयं को असभ्य व असंस्कृतज्ञ से संस्कृतज्ञ व चरित्रवान सहित सच्चा धार्मिक मनुष्य बनाने के लिए किया जाता है। भाषा का ज्ञान होने पर मनुष्य उस भाषा में उपलब्ध अच्छे व श्रेष्ठ ग्रन्थों को पढ़ कर संस्कारित हो सकता है। हम भी हिन्दी माता-पिता से उत्पन्न हुए और हमने इस भाषा का सामान्य अध्ययन किया। व्यवसाय हेतु कुछ अंग्रेजी भी पढ़ी। 18 वर्ष की अवस्था होने पर हम आर्यसमाज के सम्पर्क में आये। अन्य सभी हिन्दू धार्मिक संस्थाओं का भी परिचय प्राप्त किया और कुछ से सम्पर्क भी हुआ। उनके विचार व मान्यताओं को भी जाना। इसके साथ आर्यसमाज में प्रत्येक रविवार को भजन व विद्वानों के उपदेश तो सुनते ही थे और सत्यार्थप्रकाश का पाठ भी सुनते थे। सत्यार्थप्रकाश की बातें और उनकी व्याख्यायें सुनकर मन पर विशेष प्रभाव पड़ता था। अति कम मूल्य में मिलने वाला ग्रन्थ सत्यार्थप्रकाश भी हमने क्रय कर लिया। इससे पूर्व भी हमारे पिता का सत्यार्थप्रकाश घर पर था परन्तु उसके आरम्भ के कुछ पृष्ठ न होने के कारण हमें उसका नाम पता न चल सका था। इस प्रकार से सत्यार्थप्रकाश प्राप्त कर हमने सत्यार्थप्रकाश का अध्ययन आरम्भ किया। सत्यार्थप्रकाश ऋषि दयानन्द की अमर व सर्वोत्तम श्रेष्ठ कृति है जिससे मनुष्य को संसार के अनेक रहस्यों, धर्म व अधर्म सहित श्रेष्ठ जीवन व व्यवहार आदि के बारे में यथार्थ ज्ञान प्राप्त होता है। जैसे-जैसे हम इस ग्रन्थ को पढ़ते गये, हमें इस ग्रन्थ में वर्णित अनेकानेक विषयों का ज्ञान होता गया जो इसे न पढ़ने वालों को हजार जन्म लेने पर भी नहीं हो सकता, ऐसा हम अनुभव करते हैं। यही इस ग्रन्थ की विशेषता है। यह ग्रन्थ इतना महत्वपूर्ण है कि संसार के सभी मनुष्यों को एक नहीं अपितु अनेक बार इसका अवश्य अध्ययन करना चाहिये। राग-द्वेष से रहित होकर अध्ययन करने से पाठक को लाभ अवश्य होगा। हमारे सामने अनेक उदाहरण हैं जिसके अनुसार **जिस किसी ने भी इस ग्रन्थ को निष्पक्ष भाव से पढ़ा वह अपने पूर्व मत को छोड़ कर वैदिक मत व धर्म का अनुयायी हो गया।** ऐसे ही एक पौराणिक विद्वान संन्यासी स्वामी सर्वदानन्द सरस्वती जी थे जिन्होंने अपने एक आर्यसमाजी भक्त की सेवा से प्रसन्न होकर उसकी इच्छा व भावना को सम्मान देते हुए सत्यार्थप्रकाश को पढ़ा और अपना शेष जीवन एक वैदिक विद्वान और आर्य संन्यासी के रूप में व्यतीत किया। आज आर्यसमाज के प्रमुख स्तम्भों में उनकी गणना होती है। ऐसे और भी अनेक उदाहरण हैं।

सत्यार्थप्रकाश क्या है? इस प्रश्न के उत्तर से पूर्व इसकी भूमिका पर ध्यान देना आवश्यक प्रतीत होता है। हम जानते हैं कि संसार को बने हुए लाखों व उससे भी अधिक वर्ष व्यतीत हो गये हैं। वैदिक मान्यताओं के अनुसार सृष्टि में मनुष्यों की उत्पत्ति के समय से आरम्भ सृष्टि संवत् के अनुसार 1 अरब 96 करोड़ 8 लाख 53 हजार 116 वर्ष पूर्ण होकर अब 117 हवां वर्ष इस समय चल रहा है। आज से लगभग पांच हजार वर्ष से कुछ अधिक वर्ष पूर्व महाभारत का प्रसिद्ध युद्ध कुरुक्षेत्र में हुआ था। सृष्टि के आरम्भ से महाभारत काल तक के 1.96 अरब वर्षों तक पूरी पृथिवी और इसके सभी देशों में वेद मत ही प्रचलित था। आज संसार में जितने मत प्रचलित हैं इनमें से महाभारत काल तक किसी मत का आविर्भाव इस कारण नहीं हुआ था कि वेद मत ही पूर्ण सत्यधर्म है जिसकी सभी मान्यतायें व सिद्धान्त ज्ञान व विज्ञान पर आधारित हैं। महाभारत युद्ध में अपूर्व विनाश होने से देश की शिक्षा, धर्म व राजनीति आदि सभी व्यवस्थायें कुप्रभावित हुईं जिस कारण देश और संसार में अज्ञान फैल गया। इस अज्ञानता के कारण वैदिक धर्म अपने शुद्ध रूप में न रह सका अपितु इसका स्थान अनेक अवैदिक मान्यताओं ने ले लिया। पूर्णतया अंहिसात्मक यज्ञों में पशुओं के मांस से आहुतियां दी जाने लगी। गुण, कर्म व स्वभाव पर आधारित वर्ण व्यवस्था समाप्त होकर उसका स्थान जन्मना जातिवाद ने ले लिया। इस जातिवाद ने ऊंच-नीच और छुआ-छूत जैसी सामाजिक बुराईयों को जन्म देने के साथ स्त्रियों व शूद्रों के वेदाध्ययन आदि के अधिकार भी छीन लिये। यह लोग एक प्रकार से तत्कालीन ब्राह्मण वर्ग के गुलाम से बन गये जिससे समाज रसातल की ओर जाता रहा। भारत की इस दीन-हीन दशा में ही यहां बौद्ध और जैन जैसे वाममार्गी मतों की स्थापना हुई और विदेशों में पारसी, ईसाई व इस्लाम मत की स्थापना हुई। इसके बाद भी मतों की उत्पत्ति का क्रम थमा नहीं, नये-नये अनेक मत उत्पन्न होते रहे और इनकी संख्या व अनुयायियों में वृद्धि होती रही। देश व विदेश का समाज अनेक जातियों, समूहों व वर्गों में बंट गया जिनमें आपस में मनमुटाव, परस्पर वैरभाव व झगड़े होने लगे। भारत की बात करें तो यहां बौद्ध व जैन मत की स्थापना के साथ कुछ आगे व पीछे पौराणिक मत का भी प्रचलन हुआ। इनके तीन मुख्य सम्प्रदाय थे शैव, वैष्णव और शाक्त। शिव के पुजारी शैव, वैष्णव विष्णु के तथा शाक्त देवी के पुजारी थे। इन्होंने वेदों को छोड़कर अपने नये ग्रन्थों शिव पुराण, विष्णु वा भागवत पुराण और देवी भागवत आदि ग्रन्थों को वेदों पर वरीयता दी और आज भी ऐसा ही चल रहा है। परिणाम यह हुआ कि सुशिक्षा समाप्त होने से समाज कमजोर हुआ और देश गुलाम हो गया। ऐसे समय में महर्षि दयानन्द सरस्वती का देश में उन्नीसवीं शताब्दी उत्तरार्ध में विश्व पटल पर पदार्पण होता है।

महर्षि दयानन्द अपने पूर्वजों की परम्परानुसार बाल्यकाल में शैवमत को मानने वाले थे। शिवरात्रि के दिन शिवलिंग पर चूहों की उछल-कूद देख कर मूर्तिपूजा पर इनका विश्वास समाप्त हो गया था। इसके कुछ समय बाद घर में एक बहिन और चाचा की मृत्यु से इन्हें तीव्र वैराग्य हो गया। माता-पिता ने विवाह करना चाहा तो यह सत्य और ईश्वर की खोज और अनेक प्रश्नों के उत्तर जानने के लिए घर से भाग निकले। लगभग 17 वर्षों तक आपने देश भर में घूम कर अनेक विद्वानों व योग गुरुओं से विद्याध्ययन सहित योगाभ्यास सीखा। मथुरा के गुरु विरजानन्द जी का लगभग तीन वर्षों का सान्निध्य प्राप्त कर आप विद्या से पूर्ण तृप्त हुए और आपके सभी प्रश्नों व शंकाओं का समाधान भी हो गया। देश में सर्वत्र अविद्या व अन्धविश्वासों के कारण गुरु जी ने आपको वेद-विद्या का प्रचार करने और अज्ञान, अन्धविश्वास व असत्य मान्यताओं का खण्डन करने की प्रेरणा की। उनकी प्रेरणा से ही आप सन् 1863 में कार्य क्षेत्र में उतरे और अज्ञान व अविद्या से पूर्णतया मुक्त वैदिक धर्म का प्रचार व प्रसार किया। ऐसा करते हुए आपने मुरादाबाद निवासी व वाराणसी के डिपूटी राजा जयकृष्ण दास की प्रेरणा पर सत्यार्थप्रकाश की रचना की जिसका प्रथम संस्करण सन् 1875 में प्रकाशित हुआ था और इसके बाद इसका नया संशोधित और परिवर्धित संस्करण सन् 1883 में तैयार होकर उनकी मृत्यु के बाद सन् 1884 में प्रकाशित हुआ।

इस भूमिका के साथ सत्यार्थप्रकाश ग्रन्थ महर्षि दयानन्द की धर्म व अधर्म, सत्य व असत्य, मत व मतान्तर तथा देश, सृष्टि व समाज विषयक सत्य व वेदानुकूल मान्यताओं वाला उनके प्रायः सम्पूर्ण ज्ञान का लिखित मुख्य प्रतिनिधि ग्रन्थ है। सत्यार्थ प्रकाश को पढ़कर ईश्वर व जीवात्मा के सत्यस्वरूप का निर्भरान्त ज्ञान होता है जो कि अन्य किसी मत के ग्रन्थ को पढ़़कर नहीं होता। सत्यार्थप्रकाश के अनुसार ईश्वर व जीवात्मा दोनों अनादि व नित्य, अजर व अमर चेतन तत्व हैं जो अत्यन्त सूक्ष्म होने सहित ज्ञान व क्रियाशीलता के गुण से सम्पन्न हैं। प्रकृति एक तीसरा अनादि व सूक्ष्म पदार्थ, तत्व अथवा सत्ता है जो सत्व, रज व तम गुणों वाली है। इस जड़ प्रकृति के विकार को प्राप्त होने से ही यह सारा ब्रह्माण्ड ईश्वर द्वारा अपने ज्ञान व सामर्थ्य से बनाया गया है। सत्यार्थप्रकाश के प्रथम समुल्लास में महर्षि दयानन्द ने ईश्वर के अनन्त नामों में से 108 नामों की व्याख्या की है। बच्चों के जन्म से लेकर उनकी शिक्षा, पठन-पाठन, गायत्री मन्त्र, प्राणायाम, सन्ध्या, यज्ञ, उपनयन, ब्रह्मचर्यपालन, पठनीय प्रमाणिक ग्रन्थों की जानकारी, स्त्री व शूद्रो का अध्ययन, विवाह व गृहस्थाश्रम, वानप्रस्थ व संन्यास आश्रम, राजधर्म, ईश्वर व वेद, सृष्टि उत्पत्ति सहित जन्म-मरण से मुक्ति, आचार व अनाचार, भक्ष्य व अभक्ष्य आदि अनेकानेक विषयों पर प्रकाश डाला है। इसके साथ देश में प्रवर्तित प्रायः सभी मत मतान्तरों सहित बौद्ध, जैन, ईसा व इस्लाम मत की सत्य व असत्य को सम्मुख रखकर सभी मनुष्यों के हित व सहायतार्थ इन मतों की मान्यताओं की समीक्षा भी की है। सत्यार्थप्रकाश के अन्त में ऋषि दयानन्द ने स्वमन्तव्यामन्तव्य प्रकाश के अन्तर्गत अपनी 51 मान्यतओं का सविवरण प्रकाश किया है। सत्यार्थप्रकाश के प्रकाशन से अनेक विषयों का पहली बार ज्ञान देश व विश्व की जनता को हुआ। इस ग्रन्थ के प्रकाशन से यह भी सिद्ध हुआ कि सभी मतों के ग्रन्थों में सत्य के साथ असत्य मान्यताओं की भरमार है। केवल पूर्ण शुद्ध एकमात्र वेद मत व इसकी पुस्तकें हैं जिसका कारण वेदों का ईश्वर प्रदत्त होना है। मनुष्य के अल्पज्ञ होने से इनके द्वारा चलाया गया कोई मत पूर्ण सत्य सिद्धान्तों व मान्यताओं वाला तथा असत्य से पूर्णतया पृथक कदापि नहीं हो सकता। मनुष्य में उठने वाले प्रायः सभी प्रश्नों के समाधान इस ग्रन्थ में मिल जाते हैं। यही कारण है कि विश्व की प्रायः सभी भाषाओं मे इस ग्रन्थ के अनुवाद हुए और संसार में अनेक लोगों ने इसे पढ़ा है। सत्यार्थप्रकाश ग्रन्थ को पढ़ कर मनुष्य इसमें वर्णित विषयों का इतना विद्वान व ज्ञानी बन जाता है जितना संसार की अन्य किसी पुस्तक को पढ़कर नहीं बन सकता, ऐसा हमारा अनुभव है। ईश्वर, जीवात्मा व सृष्टि के बारे में इस ग्रन्थ में सत्य ज्ञान होने के साथ सभी मनुष्यों को अन्यों के प्रति अपने कर्तव्यों का बोध होता है और साथ ही बार-बार आने वाले जन्म व मृत्यु से छूटने का तर्क व युक्ति सिद्ध उपाय भी इस ग्रन्थ में बताया गया है जो अन्य मतों में नहीं मिलता। इससे जीवन के उद्देश्य व लक्ष्य की जानकारी सहित उन्हें प्राप्त करने के उपायों व साधनों का ज्ञान भी होता है। अज्ञानता का निवारण और दुःख निवारण प्रायः परस्पर पूरक हैं। अतः सत्यार्थप्रकाश से अज्ञान का निवारण होकर संसार की तीन सत्ताओं ईश्वर, जीव और प्रकृति के सत्य अर्थों का प्रकाश व ज्ञान होता है। यह यथार्थ ज्ञान ही संसार में सर्वोत्तम प्राप्तव्य पदार्थ, धन व पूंजी हैं। अतः सत्यार्थप्रकाश धर्म व समाज विषय का संसार का अपूर्व, सर्वाधिक उपयोगी व महत्वपूर्ण ग्रन्थ है। इन कुछ विशेषताओं व ऐसी अन्य अनेकानेक और विशेषताओं के कारण हम समझते हैं कि संसार के प्रत्येक मनुष्य को इस ग्रन्थ को पढ़कर कर्तव्य बोध प्राप्त कर सत्य का ग्रहण और असत्य का त्याग कर जीवन को सफल बनाना चाहिये। इसी के साथ लेख को विराम देते हैं। इति।

**-मनमोहन कुमार आर्य**

**पताः 196 चुक्खूवाला-2**

**देहरादून-248001**

**फोनः09412985121**